eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

पर्यावरण की रक्षा–भविष्य की सुरक्षा

[1]विवेक मिश्रा
[1]**प्रधानाध्यापक,** प्रा0वि0 सिरकौली कुर्मिन रामनगर, बाराबंकी

Received: 07 July 2021, Accepted: 15 July 2021, Published with Peer Review on line: 10 Sep 2021

Abstract

पर्यावरण की सुरक्षा से ही मानव जीवन की रक्षा संभव है। जंगल व पहाड़ों के होने से ही पर्यावरण सुरक्षित रहेगा। आज मनुष्य तेजी से वनों को नष्ट कर रहा है। जीव जन्तुओं को मार रहा है। वह प्राकृतिक वस्तुओं का दोहन कर पूरी तरह विलासिता का जीवन जी रहा है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई ने हमारे चारों तरफ के वातावरण को मानव जीवन के लिए खतरनाक बना दिया है। पर्यावरण असुरक्षित होने के कारण मानसून पर भी विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। इसी का परिणाम है कि वर्षा समय पर नहीं हो रही है। जिससे कृषि कार्य प्रभावित हो रहा है। गर्मी के समय गर्मी इतनी ज्यादा कि लोग सहन नहीं कर पा रहे हैं और मृत्यु का शिकार हो रहे हैं। पेड़ों से हमें आक्सीजन मिलती है। कोरोना काल में आक्सीजन की कमी के कारण लाखों लोग काल के गॉल में समा गए। पेड़ों की जड़ें मिट्टी को मजबूती से जकड़े रहती हैं। पेड़ों के कटने से मिट्टी की ऊपरी परत बह जा रही है, जिस कारण दिन-प्रतिदिन पैदावार में कमी होती जा रही है। बढ़ते वैज्ञानिक अविष्कार से मनुष्य जितना विकास कर रहा है उतना ही पतन की ओर भी अग्रसर है।

पर्यावरण को बचाने का सूत्र भारतीय परम्परा में मिल सकता है। इसका वर्णन वेद, पुराण में देखा जा सकता है। यदि भारत की परम्परागत जीवन शैली को देखें तो यह साफ हो जाएगा कि प्राचीन काल से ही प्राकृतिक वस्तुओं को सुरक्षित रखकर जीवन जीनें का प्रावधान है। प्राचीन काल में साधु–सन्त वन में ही निवास करते थे तथा नीम, पीपल, तुलसी, शेर, चूहा, हाथी आदि की पूजा करते थे तथा इनमें ही ईश्वर को देखते थे। एक साधारण इंसान पेड़ पौधों के बीच रहकर ज्ञान प्राप्त किए और कालान्तर में लोगों ने उन्हें भगवान मान लिया। प्राचीन काल में कुछ लोग पेड़–पौधों से औषधि/दवाईयां बनाकर असाध्य रोगों का इलाज करते थे, जिसकी महिमा का गुणगान रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों में मिलता है। आज भी कुछ लोग पेड़ पौधों के जड़ों, पत्तियां, छाल आदि से दवा बनाकर रोगों का इलाज करते हैं।

Keywords- पर्यावरण, जल, जंगल, जमीन, हवा, मानव जीवन, एवं भविष्यगत पर्यावरणीय संरक्षण।

Introduction

पर्यावरण एक ऐसा विषय है जो वास्तव में मानचित्र पर उकेरी गई सीमाओं के अनुसार नहीं चलता। पृथ्वी पर मानव अस्तित्व का आपसी जुड़ाव उस समय सबसे अधिक स्पष्ट होता है जब हम पर्यावरण और परिस्थितिकीय समस्याओं पर चर्चा करते हैं। पर्यावरण और विकास के बारे में लम्बे समय से चली आ रही बहस अभी तक समाप्त नहीं हुई है। पर्यावरण को नष्ट किए बिना अनवरत विकास का प्रादर्श ढूढने में अनेक राष्ट्रों को आज भी संघर्ष करना पड़ रहा है। पर्यावरण मुद्दों की सार्वभौमिक

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

प्रकृति के बावजूद जब विभिन्न देशों द्वारा छोड़े गए फुटप्रिन्ट के समान वितरण का प्रश्न उठता है तो प्रति व्यक्ति उत्सर्जन और कुल उत्सर्जन दृष्टिकोण के बीच बहस और अधिक जटिल विवाद का विषय बन जाता है। अंतर्राष्ट्रीय जलवायु ढंग से उजागर होती है कि कार्बन उत्सर्जन में विकसित पश्चिमी देशों का योगदान पचास प्रतिशत से भी अधिक है।

पर्यावरण और परिस्थितिकीय से जुड़े मुद्दे वास्तव में काफी जटिल और उलझाने वाले हैं। मौजूदा आर्थिक ढाचे से लेकर हमारी उपभोग की आदतें प्राकृतिक संसाधनों पर जनजातीय अधिकार से लेकर आर्थिक विकास, मानव मात्र के साझे पर्यावरणीय संसाधन बनाम राष्ट्रीय प्राथमिकताएं ऐसी कुछ सुविधाएं हैं, जिनके बारे में आम सहमति बननी सरल नहीं है। इन सभी मुद्दों पर नीतिगत कार्यवाही प्रायः कठिन होती है और इसमें विभिन्न स्तरों पर हितग्राहियों के बीच परामर्श की एक लम्बी और कष्ट-प्रद प्रक्रिया से गुजरना होता है। पर्यावरण के मुद्दों पर केन्द्रित आन्दोलन जिनमें से अनेक राजनीतिक होते हैं जो कभी–कभी हिंसक भी हो जाते हैं। जहां एक ओर इन मुद्दों पर आम सहमति के अभाव को दर्शाते हैं, वहीं दूसरी ओर लोकतान्त्रिक भारत की सजीवता और जीवटता को भी प्रतिबिंबित करते हैं। जल, जंगल, जमीन, हवा आदि प्रकृति के तमाम उपादान क्षरित और प्रदूषित होते जा रहे हैं। धरती से लेकर आकाश तक कचरों का ढेर लगता जा रहा है। लेकिन सब केवल बहस करने में, कानून बनाने में और एक दूसरे मुल्कों पर तोहमत लगाने में उलझे हैं। व्यवहारिक स्तर पर वह सब नहीं कर पा रहे, जो करना चाहिए। मसलन जीवन शैली में बदलाव, विकास की अवधारणा में परिवर्तन, उपभोक्तावाद से परहेज आदि नहीं कर पा रहे हैं। जबकि ये ठोस उपाय है।

इक्कीसवी सदी की शुरूआत में इस संकट की स्पष्ट पहचान हो पायी लेकिन इसके बीज चार सौ साल पहले सोलहवीं शताब्दी में ही बो दिए गए थे। यह वह काल था जब इंग्लैण्ड का दार्शनिक बेकन ज्ञान के शक्ति होने की घोषणा कर रहा था और जर्मन साहित्य में ज्ञान, प्रभुत्व और यौवन के लिए अपनी आत्मा को शैतान के हाथों गिरवी रखने वाला डा0 फास्ट का चरित्र नायक बन रहा था। यूरोपियनों ने निवासियों को लूटा, वहां की पुरानी सभ्यताओं को नष्ट किया और वहां के बाशिंदों को जंगलों में खदेड़कर उनकी जमीनों पर कब्जा कर लिया था। इसी पृष्ठभूमि में ज्ञान को शक्ति और आत्मा को गिरवी रखने का विचार प्रचारित किया गया। जिसका प्रभाव हुआ कि लोगों के पास अतिरिक्त संपदा इकट्ठी होने लगी। इसी लूट की सम्पत्ति पर यूरोप में औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। पर्यावरण संकट की जड़ें इसी औद्योगिक क्रान्ति से जुड़े हैं। औद्योगिक क्रान्ति ने आज की इस आधुनिक सभ्यता को जन्म दिया। जिसका केन्द्रीय प्रतिपाद्य उपभोक्तावाद है। इसका मुख्य उद्देश्य यही घोषित करता है कि संसार में जो कुछ है, सब भोग के लिए है। इसलिए आदमी को सबका भोग कर लेना है, करते रहना है। कई दार्शनिकों ने अपने कथन में लिखा कि सुख ही जीवन का एकमात्र लक्ष्य है। शरीर नश्वर है। पुनर्जन्म कुछ नहीं होता है। इसलिए जीवन में केवल सुख प्राप्त करना चाहिए। तथा प्राप्त करने के लिए प्रयासरत रहना चाहिए। इसी का नतीजा हुआ कि संयम, सदाचार जैसे शब्द बेईमानी हो गए। अब आदमी एक आर्थिक प्राणी हो गया और उसका कुल काम सुखभोग के लिए आर्थोपार्जन रह गया। इसमें उसे अन्य प्राणियों के लिए चिंतित होने की गुंजाइश ही नहीं रही। उसके पास पेड़–पौधे, पशु–पक्षी, नदी–पहाड़, धरती– आकाश के बारे में सोचने का

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

समय ही नहीं है। उसे तो बस प्रकृति के इन तमाम उपादानों से अपने भोग के लिए सामग्री पैदा करनी थी। उसका केवल और केवल उद्देश्य अपने लिए सुख के संसाधन जुटाना था। प्राकृतिक संसाधनों का दोंहना करके अपने सुख के लिए भोग की सामग्री का उत्पादन करना उसके दिन–रात काम का करने का एक मात्र उद्देश्य बन गया है।

पांचवी शताब्दी के दार्शनिक प्रोटोगोरस ने कहा था कि– ''मनुष्य सभी वस्तुओं का माप दण्ड है। यद्यपि इस कथन का मनुष्य शब्द लगातार विवाद में बना रहा संसार में जो कुछ भी है वह मनुष्य के लिए ही है। यह सबके मन मस्तिष्क में बैठ गया। विज्ञान की बदौलत सोलहवी सदी में आधुनिक दर्शन की नीव रखी गई, जिसका प्रस्ताव ज्ञान को शक्ति कहने वाला दार्शनिक बेकन रहा। इस प्रकार वैज्ञानिक अविष्कारों और दार्शनिक अवधारणों के समन्वय से औद्योगिक क्रान्ति हुई। जिसमें उद्योगों द्वारा अकूत संपदा पैदा करने की सुविधा हासिल हुई। उद्योगों के लिए कच्चे माल की जरूरत महसूस होने लगी। यही कच्चा माल प्राप्त करने के लिए मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करने लगा। इसका परिणाम यह हुआ कि जंगल काटकर हाईवे बनाना शुरू किया। जंगल कटने से पशु–पक्षी मरने लगे। जैसे–जैसे प्रकृति के उपादान नष्ट होते गए वैसे–वैसे इन प्राणियों का वजूद समाप्त होता गया। इसी कारण अब कई पशुओं और पक्षियों की प्रजातियां लुप्त हो गईं और कई लुप्त होने के कगार पर हैं। समय के साथ–साथ विज्ञान के अविष्कारों में वृद्धि हुई। मनुष्य की जरूरतें बढ़ती गई। इस प्रकार जरूरतों को पैदा करने और उन्हें पूरा करने का एक चक्र निर्मित हुआ। जिनके कारण प्राकृतिक संपदाओं का दोहन, क्षरण और प्रदूषण आज उस भयावह संकट का रूप ले चुका है, जिससे सारी दुनिया चिंतित है। जब तक पर्यावरण सुरक्षित नहीं रहता तब तक अन्य प्राणियों समेत मनुष्य भी सुरक्षित नहीं रह सकता हैं। पर्यावरण को बचाने का सूत्र भारतीय परम्परा में मिल सकता है, यदि भारत की परम्परागत जीवन शैली को देखें तो यह साफ हो जाएगा कि यहां प्रकृति को नष्ट करके नहीं, उसे सुरक्षित रखकर जीवन जीने का प्रावधान है। इसलिए यहां आज भी नीम, पीपल, बरगद, तुलसी की पूजा की जाती है। यहां नीम, पीपल जैसे पेड़ को नहीं काटने और नदियों में कूड़ा कचरा नहीं डालने का प्रावधान है। नदियां–पहाड़ों की पूजा होती है। हवा आग को देवता मानकर पूजा होती है। यह सब प्रकृति और पर्यावरण को सुरक्षित रखने के ही उपक्रम हैं।

अशक्यं प्रकृतेः ऋतें जीवनम्
''प्रकृति के बिना जीवन सम्भव नहीं है।''

वेदों में पृथ्वी, वनस्पति, अंतरिक्ष आदि सबकी शान्ति की प्रार्थना की गई है। तो उपनिषदों में अग्नि, जल आदि में व्याप्त देवताओं को नमस्कार किया गया है। गीता में कृष्ण का स्वयं को पेड़ों में पीपल बताने का उद्देश्य भी यही है। कुल मिलाकर यहां पर ऐसी जीवन पद्धति की वकालत की गई है जिसमें मनुष्य को केन्द्र में रखकर अन्य सभी वस्तुओं और प्राणियों का अपने लिए उपभोग की मनाही है। यहां ईश्वर को सत्य माना गया है और प्राकृति जल, वायु, अग्नि को उनका अंश। यह भी माना गया है कि ईश्वर कण–कण में व्याप्त है और सभी प्राणियों के अन्दर भी वही निवास करता है। इसलिए मनुष्य का यह दायित्व है कि वह इन सबकी सुरक्षा का भी ख्याल रखें।

कहा भी गया है–

eISSN 2581-8996
[Date]
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 4, Issue 02, July 2021

और यह तभी हो सकता है जब सबका सिर्फ अपने भोग के लिए उपयोग नहीं किया जाए बल्कि उनके सहयोग के साथ जीवन जिया जाए। जब तक व्यक्ति या कोई भी कृषि आधारित रहा तब तक पर्यावरण सुरक्षित रहा लेकिन जब से औद्योगिक व्यवस्था शुरू हुई तब से पर्यावरण असुरक्षित होने लगा। अतः पर्यावरण को सुरक्षित करने के लिए सबसे मूल काम अपनी व्यवस्था और जीवन शैली में परिवर्तन लाना है। उसे संयामित कर प्रकृति के साथ सहयोग पर आधारित करना है। इस दिशा में किए गए सम्मेलनों, प्रकाशनों और कानूनों आदि का भी महत्व है। ऑकड़ों और अनुपातों की भी जरूरत है। इन्हीं सब की वजह से तो अब एक संपोषित विकास की अवधारणा अस्तित्व में आई है। इस दिशा में बेस प्रयास करने की जरूरत है और यह किसी एक आदमी के प्रयास से सम्भव होने वाला नहीं है। पर्यावरण की सुरक्षा हर व्यक्ति का दायित्व है। इसलिए इसका आपेक्षित परिणाम सम्मिलित प्रयास से ही मिल सकता है।

पृथ्वी दिवस पर आर0के0 पचौरी जी ने अपने लेख में कहा था कि ''1969 में जब जॉन मैक्कानेले ने इसके नाम और अवधारणा के बारे में सोचा था, 1970 में जब इसे पहली बार मनाया गया और 1990 में जब 141 देश इस दिवस से सीधे तौर पर जुड़े तो कहीं न कहीं यह अन्तर्मन में द्वन्द्व हुआ कि मनुष्य जिस विकास की राह पर है, वह विकास वास्तव में विनाश की ओर ले जाता है। इस विकास से हुए परिवर्तनों से पृथ्वी पर बोझ बढ़ता जा रहा है। वर्ष 2013 के आर्थिक सर्वेक्षण मे स्थिति को सुधारने की चर्चा की गई है जो निम्न है ''भारत के दृष्टिकोण से टिकाऊ विकास लक्ष्य, विकास व पयार्सवरण को लक्ष्यों के एकमात्र सेट के रूप में साथ में लाया जाना चाहिए। वैश्विक सम्मेलनों में सबसे बड़ी कमजोरी पर्यावरण और विकास के बीच कुसंतुलन की उपस्थिति ही है। वैश्विक लक्ष्यों में मुख्यतः प्रत्येक परिवार तथा समुदाय के लिए प्राकृति तथा प्राकृतिक संसाधनों के निष्पक्ष पहुंच के आधार पर पर्यावरण संरक्षण को सुनिश्चित करना उद्देश्य होना चाहिए। नदी, जंगल, भूमि या मृदा, शहरी क्षेत्र या फसल क्षेत्र आदि प्राकृतिक संसाधनों का एक प्रणाली के रूप में प्रबन्धन विकसित करने की आवश्यकता है। जिसमें इन्हें प्राथमिक स्त्रोत समझने की बजाय 'संसाधन' के रूप में इनके प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया जा सके। प्राकृतिक संसाधन गणना या हरित गणना की धारणा और पद्यति की शुरूआत बीसवीं शताब्दी के अन्त में शुरू की गई। लेकिन यह जारी नहीं रखी गई है। हरित गणना और हरित सकल घरेलू उत्पाद की धारणा को पर्यावरणीय कार्य योजनाओं और विकासात्मक योजनाओं के साथ अवश्य जोड़ा जाना चाहिए।

न कूपखननं युक्तं
प्रदीप्ते वह्निना गृहें।
चिन्तनीया हि
विपदा मादावेव प्रतिक्रियाः।।

''किसी समस्या का उपाय समय से पहले सोच लेना चाहिए, घर को आग लगने पर कुआ खोदना उचित नहीं है।''

प्रत्येक व्यक्ति को पर्यावरण सुरक्षित रखने के लिए दृढसंकल्पित होना चाहिए। जितनी जल्दी वह संभल जाएगा उतना ही उसके आने वाली पीढ़ी के लिए अच्छा होगा। पर्यावरण की रक्षा ही भविष्य की सुरक्षा है।

''प्रकृति का न करें हरण
आओ बचायें पर्यावरण''।।

सन्दर्भ सूचीः–

- ''योजना'' मासिक पत्रिका
- दैनिक समाचार पत्रों की सम्पादकीय

.